(छहढाला प्रवचन, पृष्ठ : 27 का शेष...)

उनकी यह बात सच्ची नहीं है। इस पृथ्वी के नीचे सात नरकों के स्थान मौजूद हैं और उनमें असंख्यात जीव नारकीरूप से अभी भी महान कष्ट भोग रहे हैं। ये नारकी जीव तो पंचेन्द्रिय हैं, जबकि विष्टा के कीड़े तो विकलेन्द्रिय तिर्यंच हैं। वे तो नारकी से भी अधिक दुःखी हैं; यद्यपि उनको बाहर में प्रतिकूल संयोग कम दिखने में आता है, परन्तु अन्दर में दुःख की तीव्रता से वे मूर्च्छित हो गये हैं; इसकारण संयोगदृष्टि से देखनेवालों को उनके दुःख की तीव्रता नहीं दिखती।

नारकी तो पंचेन्द्रिय हैं, उनमें तो उपदेश सुनने की योग्यता भी है और वे उसका ग्रहण भी कर सकते हैं, कोई-कोई जीव तो वहाँ सम्यग्दर्शन भी पा लेते हैं। सातवीं नरक पृथ्वी पर असंख्यात जीव सम्यग्दर्शन पा चुके हैं। जबकि विष्टा के कीड़े आदि तो दो इन्द्रियवाले ही हैं, वे अपनी चेतनाशक्ति को बहुत हारे हुये हैं, उनका ज्ञान इतना हीन हो गया है कि 'तुम आत्मा हो' ह्न ऐसा शब्द सुनने की भी उनमें शक्ति नहीं रही; उपदेश ग्रहण करने की शक्ति ही वे खो बैठे हैं; ज्ञानचेतना को खोकर बेहोशपन में वे बहुत ही दुःख वेद रहे हैं। उनको इतना दुःख है कि किसी भी तरह के प्रतिकूलसंयोग से भी उसका माप नहीं हो सकता।

आत्मा का स्वभाव अनन्त आनन्दमय है; उस आनन्दस्वभाव की विराधना करके जीव जितनी विपरीतता करता है, उतना ही अनन्त दुःख भोगता है। आनन्दस्वभाव की आराधना करने से सिद्ध भगवन्त अनन्त सुख भोग रहे हैं; और उसकी विराधना करके राग में सुख मानने वाले मिथ्यादृष्टि जीव संसार में अनन्त दुःख भोग रहे हैं। जब कोई शुभ विकल्प उठे वह भी चैतन्य के आनन्द से विरुद्ध दुःखदायक है, तो फिर देहबुद्धि से तीव्रहिंसादि पाप करनेवाले के दुःख का तो कहना ही क्या? मांसभक्षी, शिकारी-शराबी आदि तीव्र महापाप करनेवाले जीव नरक में जाते हैं; अभी उसका मृतदेह तो यहाँ मुलायम गद्दे पर पड़ा हो और उधर वह पाप करनेवाला जीव नरक में उत्पन्न होकर वहाँ हजारों बिच्छुओं के डंक से भी अधिक दुःख भोग रहा हो, उसके शरीर के खंड-खंड हो जाते हों। जीव ने पूर्वकाल में जितना पाप कमाया है उतना दुःख नरक में भोगता है। ऐसे नरकादि के दुःख हर एक जीव अनन्तबार भोग चुका है। उससे छूटने का अब यह मौका है। दुःखों का यह वर्णन इसलिये किया जाता है कि उनके कारणरूप मिथ्यात्वादि भावों को जीव छोड़ दे और सुख के उपाय में लगे। ✻

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 26 291 अंक : 3

प्रवचनसार
कलश पद्यानुवाद

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(हरिगीत)

वाणीगुंफन व्याख्या व्याख्येय सारा जगत है।
और अमृतचन्द्रसूरि व्याख्याता कहे हैं ।।
इसतरह कह मोह में मत नाचना हे भव्यजन !।
स्याद्विद्याबल से निज पा निराकुल होकर नचो ।।21।।

चैतन्य का गुणगान तो उतना ही कम जितना करो।
थोड़ा बहुत जो कहा वह सब स्वयं स्वाहा हो गया ।।
निज आत्मा को छोड़कर इस जगत में कुछ अन्य ना।
इक वही उत्तम तत्त्व है भवि उसी का अनुभव करो ।।22।।

(दोहा)

क्रिसमस के दिन चतुर्दशी अगहन सुद शनिवार।
पूर्ण हुआ यह विक्रमी इकसठ दोय हजार ।।

● समाप्त ●

योगी तो निर्जरा ही करता है

पूज्यपाद आचार्य श्री देवनन्दिस्वामी के प्रसिद्ध ग्रन्थ इष्टोपदेश के 44 वें श्लोक पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरसगर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। मूल श्लोक इसप्रकार है ह्न

अगच्छंस्तद्विशेषाणामनभिज्ञश्च जायते।
अज्ञाततद्विशेषस्तु बद्ध्येते न विमुच्यते ।।44।।

शरीरादि बाह्य पदार्थों से अनभिज्ञ रहता हुआ योगी अपने आत्मस्वरूप में ही स्थिर होता है। इस कारण वह बंध के कारणरूप राग-द्वेष के अभाव में कर्मों से न बंधता हुआ निर्जरा ही करता है।

अब शिष्य प्रश्न करता है कि योगी पुरुष आत्मा के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं भी प्रवृत्ति नहीं करते हैं तो उस समय वे क्या करते हैं ? इसके उत्तरस्वरूप आचार्यदेव ने यह गाथा कही है।

जिसे निजस्वरूप में विराजमान आनन्द प्रभु की दृष्टि हो गयी है ह्न ऐसे आध्यात्मिक जीव को परमानन्द स्वरूप आत्मा की ऐसी लगन लगी है कि आत्मा को छोड़कर बाह्य परपदार्थ एवं शरीर की सुन्दरता-असुन्दरता, अनुकूलता-प्रतिकूलता का उसे विचार नहीं रहता।

धर्मी जीव बाहर में भले ही युद्ध क्षेत्र में लड़ रहा हो अथवा अन्य कुछ कार्य कर रहा हो; फिर भी उसकी दृष्टि तो सदैव एक निज ध्रुव आत्मा पर ही रहती है, वहाँ से नहीं हटती। उसकी दृष्टि अपनी विशेष स्वभाव पर्याय पर भी नहीं जाती तो शरीरादि बाह्य पदार्थों की विशेष अवस्था पर कैसे जाये ? स्वयं की विशेष निर्मल पर्याय का भी उसे आदर नहीं है तो पर की विशेष पर्याय का आदर कैसे हो ?

धर्मी को अपने पुरुषार्थ की कमजोरी के कारण जिसप्रकार अपनी विशेष पर्याय के प्रति थोडा बहुत राग-द्वेष हो जाता है; उसीप्रकार पर के विशेषों में भी राग-द्वेष हो जाता है। वह राग-द्वेष पर के विशेष के कारण नहीं है, अपितु जीव की स्वयं की कमजोरी के कारण ही है। देखो ! इष्टोपदेश में भी कैसी सूक्ष्म बात करते हैं।

सम्यग्दर्शन होते ही शुद्धात्मा की दृष्टि का माणिकस्तंभ तो रोपा ही गया है, पश्चात् आत्मा की विशेष लगन लगती है। धर्मी जीव को स्वयं या पर के विशेषों का लक्ष नहीं है। ध्रुव सामान्य आनन्दस्वभाव के आगे धर्मी किसी अन्य को स्वीकार नहीं करता। वहाँ किसी अन्य की कोई आवश्यकता नहीं है।

अहो ! दिगम्बर भावलिंगी संतों के एक-एक श्लोक और भावों का क्या कहना ? अल्प शब्दों में ही महान भाव भरे हैं। एकबार जिसे निजस्वरूप का अनुभव हो जाता है, उसकी दृष्टि में सदैव सामान्य स्वभाव ही दिखाई देता है। धर्मी जीव का परिणमन अन्तर्मुख हो जाता है। उसे बाहर में कुछ भी एकत्व भासित नहीं होता ह्न ऐसा धर्मी जीव स्व और पर के विशेषों की ओर दृष्टि नहीं करता; अत: उसे राग-द्वेष भी नहीं होते, कर्मों का बंधन भी नहीं होता है और कर्मों की निर्जरा ही होती है।

अन्तरस्वभाव की दृष्टि के जोर से शुद्धि की वृद्धि जैसे-जैसे बढती जाती है; वैसे-वैसे बाहर के कर्मों की निर्जरा भी बढती जाती है।

पूर्व में अज्ञानदशा में स्व-पर के विशेषों पर दृष्टि थी, पर्यायबुद्धि थी। उन विशेषों के कारण राग-द्वेष उत्पन्न होने से बंध होता था; किन्तु अब वहाँ से दृष्टि हटकर सामान्य स्वभाव पर जमने से स्वभाव में शुद्धि की वृद्धि होने से कर्मों की निर्जरा होती है। भाई ! अपने विशेष से दृष्टि हट गई तो शुद्धि की वृद्धि हो गई।

आहाहा ! एक-एक श्लोक लिखते समय मुनिराजों के अन्तर में अमृत का कुण्ड उछलता है। उसमें से निकले हुये ये गहरे भाव हैं।

वास्तव में तो स्व और पर के विशेष का लक्ष छोडकर निज सामान्य स्वभाव का लक्ष करते ही जो ज्ञान होता है, वही यथार्थ ज्ञान है। सामान्यस्वभाव की दृष्टि के जोर में विशेष की शुद्धि बढ जाती है और कर्मों की निर्जरा होती है। व्रतादि के विकल्प काल में जो निर्जरा होती है, उसे छोडकर निर्विकल्पदशा होते ही निर्जरा बढ जाती है। मात्र व्रतादि के विकल्प से निर्जरा नहीं होती; अपितु सामान्य के आश्रय से जैसे-जैसे शुद्धि की वृद्धि बढती जाती है, वैसे-वैसे निर्जरा भी होती है।

(शेष पृष्ठ : 28 पर ..)

परमाणु और स्कंध

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की 20 वीं गाथा पर हुए आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

गाथा मूलत: इसप्रकार है ह्न

अणुखंधवियप्पेण दु पोग्गलदव्वं हवेइ दुवियप्पं।
खंधा हु छप्पयारा परमाणू चेव दुवियप्पो ॥20॥

परमाणु और स्कंध ह्न ऐसे दो भेद से पुद्गल द्रव्य दो प्रकार का है। स्कंध वास्तव में छह प्रकार का है और परमाणु के दो भेद हैं।

(गतांक से आगे)

यहाँ पुद्गल द्रव्य के भेदों का कथन किया जा रहा है। प्रथम तो पुद्गल द्रव्य के दो भेद हैं ह्न स्वभाव पुद्गल और विभाव पुद्गल। उनमें परमाणु तो स्वभाव पुद्गल है और स्कंध विभाव पुद्गल है।

पुद्गल में भी विभाव की चर्चा की गई है, इसका अर्थ यह नहीं है कि वह दु:खी होता है। आत्मा में विभाव पर्याय होती है, वह तो दु:ख दायक है। पुद्गल में विभाव पर्याय होती है; इसलिये वह दु:खी है और एक परमाणु सुखी है ह्न ऐसा नहीं है। जीव की विभाव अवस्था में दु:ख और स्वभाव अवस्था में सुख है।

स्वभाव पुद्गल भी कार्य परमाणु और कारण परमाणु के भेद से दो प्रकार का है। मूल गाथा में स्वभाव पुद्गल के कोई भेद नहीं बताये गये हैं; परन्तु टीकाकार ने भेद डालकर समझाया है। स्कंध के छह प्रकार हैं ह्न (१) पृथ्वी (२) जल (३) छाया (४) चक्षु के अतिरिक्त अन्य चार इन्द्रियों के विषयभूत स्कंध (५) कार्मण वर्गणा योग्य स्कंध (६) कर्म के अयोग्य स्कंध।

इन सभी की विस्तृत चर्चा आगामी गाथाओं में की जायेगी।

अब इस गाथा को पूर्ण करते हुये टीकाकार पद्मप्रभमलधारि देव ३७ वें श्लोक में कहते हैं ह्न

(अनुष्टप्)

गलनादणुरित्युक्तः पूरणात्स्कन्धनामभाक्।
विनानेन पदार्थेण लोकयात्रा न वर्तते।।37।।

पुद्गल पदार्थ गलन द्वारा अर्थात् भिन्न हो जाने से परमाणु कहलाता है और पूरण द्वारा अर्थात संयुक्त होने से स्कन्ध कहलाता है। इस पदार्थ के बिना लोकयात्रा पूर्ण नहीं हो सकती।

स्कन्ध से जो रजकण उत्पन्न होते हैं, वे पुद्गल परमाणु कहलाते हैं। स्कंध में से निकलने वाले परमाणुओं को कोई आत्मा छुड़ाता नहीं है, स्वयं ही जिन परमाणुओं में छूटने की लायकात होती है, वे ही छूटते हैं और अतीन्द्रिय ज्ञान उसे जानता है।

पुद्गल का गलन परमाणु कहलाता है और पुद्गल का पूरण स्कन्ध कहलाता है। इसप्रकार अजीव पुद्गलद्रव्य की दो भेदों से व्याख्या की। इनके बिना लोकयात्रा पूर्ण नहीं हो सकती है; अतः चार गतिरूप संसार में जीव परिभ्रमण करता है, उसमें निमित्त कारण पुद्गल द्रव्य है। आत्मा तो चिदानन्द ध्रुव ज्ञायक भगवान है, परिभ्रमण करना उसका स्वभाव नहीं है। यहाँ पर्यायगत योग्यता को गौण करके पुद्गल के कारण यह जीव संसार में परिभ्रमण करता है ह्न ऐसा कहा है।

पर्यायदृष्टि के कारण जीव चारगति में परिभ्रमण कर रहा है, जिसमें निमित्त पुद्गल है। यहाँ निमित्ताधीन दृष्टि होने से निमित्त के कारण परिभ्रमण करता है ह्न ऐसा कहा है, अतः द्रव्यदृष्टि करके पर्यायबुद्धि को छोडना चाहिये। शास्त्र की अपेक्षाओं को बराबर समझना चाहिए।

जहाँ-जहाँ जे-जे योग्य छै, तहाँ समझवूं तेह।
तहाँ-तहाँ ते-ते आचरे, आत्मार्थी जन एह।।

आगामी श्लोक में पुद्गल ही जीव को नचाता है ह्न ऐसा कहेंगे। एक समय के विकार को गौण करके सम्यग्दर्शन के विषयभूत चिदानन्द आत्मा को मुख्य करने का लक्ष्य होना चाहिये। कर्म का निमित्त होने पर विकार उत्पन्न होता है,

अतः विकाराधीन दृष्टि छोड़कर स्वभावदृष्टि कर ह्न ऐसा आचार्य भगवान कहते हैं।

जिसप्रकार कोई आर्य मनुष्य अनार्य के संग में पड़कर अभक्ष्य-भक्षण करने लगे तो श्रेष्ठ मनुष्य उससे कहते हैं कि यह तुम्हारा कार्य नहीं है; उसीप्रकार यह आत्मा चार गतियों में स्वयं की भूल से रखडता हुआ निमित्ताधीन दृष्टि करता है; किन्तु यह आत्मा का स्वभाव नहीं है। यह कर्म के कारण हुआ भाव होने से कर्म का ही कहलाता है। चिदानन्द ध्रुव आत्मा केवल ज्ञाता अर्थात् जानने-देखनेवाला है, करनेवाला नहीं है।

अब आगामी गाथाओं में पुद्गल स्कंधों का स्वरूप विस्तार से कहते हैं ह्न

अइथूलथूल थूलं थूलसुहुमं च सुहुमथूलं च।
सुहुमं अइसुहुमं इदि धरादियं होदि छब्भेयं।।21।।
भूपव्वदमादिया भणिदा अइथूललिमिदि खंधा।
थूला इदि विण्णेया सप्पीजलतेल्ल मादीया।।22।।
छायातवमादीया थूलेदरखंधमिदि वियाणाहि।
सुहुमथूलेदि भणिया खंधा चउरक्खविसया य।।23।।
सुहुमा हवंति खंधा पाआंग्गा कम्मवग्गणस्स पुणो।
तव्विवरीया खंधा अइसुहुमा इदि परूवेंति।।24।।

अतिस्थूलस्थूल, स्थूल, स्थूलसूक्ष्म, सूक्ष्मस्थूल, सूक्ष्म और अतिसूक्ष्म ह्न ऐसे पृथ्वी आदि स्कन्धों के छह भेद हैं। भूमि, पर्वत आदि अतिस्थूलस्थूल स्कन्ध कहे गये हैं। घी, जल, तेल आदि स्थूल स्कन्ध जानना। छाया, आतप, धूप आदि स्थूलसूक्ष्म स्कन्ध हैं। चक्षु इन्द्रिय के अतिरिक्त अन्य चार इन्द्रियों के विषयभूत स्कन्धों को सूक्ष्मस्थूल स्कन्ध कहा गया है। पुनश्च कर्म वर्गणा के योग्य स्कन्ध सूक्ष्म स्कंध हैं, उनसे विपरीत अर्थात् कर्म वर्गणा को अयोग्य स्कन्ध अतिसूक्ष्म कहे जाते हैं।

यह विभाव पुद्गल अर्थात् स्कंध के स्वरूप का कथन है, परमाणु का कथन नहीं है। इन गाथाओं में स्कंधों के छह प्रकार बताये गये हैं। **(क्रमशः)**

छहढाला प्रवचन

रे जीव ! सुन, यह तेरे दुःख की कथा

तहाँ भूमि परसत दुःख इसो, बिच्छू सहस डसें नहिं तिसो।
तहाँ राघ-श्रोणितवाहिनी, कृमिकुलकलित देहदाहिनी।।९।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान दौलतरामजीकृत छहढाला पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

अब चार छन्दों द्वारा नरकगति के दुःखों का कथन करते हैं ह्न

संसार में एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय होना कठिन है और पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य होकर भी जो तीव्र पाप करते हैं, वे नरक में जाते हैं। नरक में उत्पत्ति के स्थान रूप उलटे मुँहवाले बिलों में उत्पन्न होकर वे नारकी उलटे सिर नीचे टपकते हैं ह्न नीचे गिरते ही वहाँ की भाले जैसी कर्कश जमीन के आघात से महान कष्ट पाकर फिर एकदम उछलते हैं और फिर जमीन पर भाले या छुरे जैसे तीव्र शस्त्रों के ऊपर गिरते हैं। बार-बार ऐसा होने से उनका पूरा शरीर छिन्न-भिन्न हो जाता है और वे महादुःख पाते हैं।

नरक में उपजते ही वे जीव ऐसी असह्य पीड़ा को भोगते हैं, मानो दुःख के समुद्र में डूब रहे हों। उनकी असह्य वेदना कैसे कही जाये? वहाँ की पृथ्वी ही ऐसी है कि जिसके स्पर्श मात्र से ही हजारों बिच्छुओं के काटने जैसी वेदना होती है। अत्यन्त जहरीला बिच्छू, जिसका डंक लगते ही यहाँ के मनुष्य मर जाये ह्न ऐसे एक नहीं, हजारों बिच्छुओं के एक साथ डंक मारने पर जो तीव्र पीड़ा हो, उससे भी अधिक पीड़ा नरक में जमीन को छूने मात्र से होती है। जमीन को छूते ही मानों कोई काला नाग काट रहा हो ह्न ऐसी पीड़ा देह में होती है। जहाँ की जमीन ही इतनी कर्कश, तब वे कहाँ जाकर बैठें? नरक की भूमि में दुर्गंध भी इतनी है कि यदि उसका एक छोटा-सा कण भी यहाँ रखा जाये तो उसकी दुर्गंध से अनेक कोस के लोग मर जाये। वहाँ पर दुर्गंधमय रक्त पीप से भरी हुई वैतरणी नदी (वास्तव में नदी न होकर एक तरह की विक्रिया है उस) को देखकर भ्रम से पानी समझकर नारकी उसमें कूद पड़ता है; परन्तु उससे तो उसका दाह और अधिक बढ़ जाता है; वह वैतरणी नदी अतिशय दाह करनेवाली है और ऐसी दुर्गंधवाली है ह्न मानो सड़े हुए कीड़ों से ही भरी हो।

नरक में कीड़े-बिच्छू आदि विकलेन्द्रिय जीव नहीं होते एवं सर्पादिक तिर्यंच भी नहीं होते; परन्तु दूसरे नारकी जीव विक्रिया द्वारा ऐसा रूप धारण करते हैं। किसी को

ताँबे के धधकते रस में फेंकने पर उसे जो दुःख हो, उससे अधिक दुःख वैतरणी में पड़नेवाले नारकी जीव को होता है। अज्ञानी लोगों में ऐसी कल्पना है कि जिसने यहाँ पर गाय का दान दिया होगा, वह नरक में उस गाय की पूँछ पकड़कर वैतरणी नदी को पार करेगा; परन्तु वह तो उनका भ्रम है। जो गाय यहाँ दी गई, वह नरक में कैसे पहुँच गई ? तथा उस गाय का दान देनेवाला नरक में जाये और वहाँ पर गाय की पूँछ पकड़कर वैतरणी को पार करे ह्न यह कैसी बात? उससे अच्छा तो यह है कि ह्न नरक में जाना ही न पड़े, ऐसा उपाय करना। आत्मा का ज्ञान करने से नरकगति के मूल का छेद हो जाता है; अतः आत्मज्ञान का उपाय करना चाहिए।

मांस-मछली-अण्डे खानेवाले तथा शिकार वगैरह महापाप करनेवाले पापी जीव मरकर नरक में जाते हैं और तीव्र दुःख भोगते हैं। इतना तीव्र दुःख है कि वे जीव मरकर भी उससे छूटना चाहते हैं; परन्तु आयुस्थिति पूर्ण होने के पहले वे छूट नहीं सकते। अपने अशुभ भावों से जो पापस्थिति बाँधी, उसका फल वे भोग रहे हैं। उनके शरीर के लाखों टुकड़े होकर इधर-उधर बिखर जाने पर भी वे मरते नहीं, पारे की तरह उनका शरीर फिर इकट्ठा हो जाता है। नरक के ऐसे तीव्र दुःखों का कारण मिथ्यात्व है ह्न ऐसा जानकर उसका सेवन छोड़ो; और सुख का कारण सम्यक्त्वादि है ह्न ऐसा जानकर उसका सेवन करो।

इस पृथ्वी के नीचे नरक के सात स्थान हैं, उसमें असंख्य जीव अपने पापों के फलरूप घोर दुःख भोग रहे हैं। यह कोई कल्पना नहीं, अपितु सत्य है; सर्वज्ञ भगवान का देखा हुआ है। लाखों-करोड़ों जीवों का संहार करने के क्रूर-निर्दय-घातक परिणामों का पूरा फल भोगने का स्थान इस मनुष्यलोक में नहीं है, यहाँ तो अधिक से अधिक एकबार उसे मृत्युदण्ड दिया जा सकता है; अरे ! सैकड़ों लोगों को गोली से उड़ा देनेवाला क्रूर डाकू पकड़ा भी नहीं जाता; शायद कभी पकड़ा भी जाये तो न्याय के द्वारा उसका गुनाह साबित न हो सकने से वह बेगुनाह छूट जाता है; तो क्या उसके पापों का फल उसको नहीं मिलेगा ? अरे ! उसके पापों के फल में वह नरक में अरबों-असंख्य वर्षों तक महादुःख पायेगा। जगत में जिसप्रकार पुण्य-पाप करनेवाले जीव हैं; उसीप्रकार उसके फलरूप स्वर्ग व नरक के स्थान भी हैं।

कितने ही जीव स्थूलबुद्धि से ऐसा मानते हैं कि यहाँ पर दुर्गन्धयुक्त विष्टा आदि में जो कीड़े उत्पन्न होते हैं, वही नरक है, इसके सिवाय दूसरा कोई नरक नहीं है; परन्तु

(शेष पृष्ठ : 4 पर....)

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : शुभ-अशुभभाव में व्यवहार से भेद होने पर भी परमार्थ से भेद करनेवाला घोर संसार में भटकेगा ह्न ऐसा शास्त्र में कहा है; तथा देव-शास्त्र-वाणी पुण्य के बिना मिलती नहीं; ऐसी स्थिति में अग्रिम भव में उन्हें प्राप्त करने के लिए पुण्य की अपेक्षा तो रहती है न ?

उत्तर : पुण्य से देव-शास्त्र-वाणी का योग मिलता है ह्न यह बात सत्य है; परन्तु पुण्यभाव वर्तमान में दु:खरूप है और भावी दु:ख का कारण भी है ह्न ऐसा शास्त्र में कहा है। कारण कि पुण्य से जो सामग्री मिलेगी, उसके लक्ष्य से जो राग होगा, वह दु:खरूप है। भगवान की वाणी मिले और उस पर लक्ष्य जाय, वह राग भी दु:खरूप है। शुभराग आता है, होता है; फिर भी चेतन का धर्म शुभराग नहीं है, शुभराग तो दु:खरूप ही है। अहा ! यह बात जगत को चुभती हुई लगती है और सूक्ष्म होने के कारण अन्तर प्रवेश होना कठिन है, परन्तु क्या करें ? सत्य तो ऐसा ही है।

प्रश्न : स्वरूप का अनुभव हुआ न हो और शुभ को हेय जानने लगे तो क्या स्वच्छन्दी नहीं हो जायेगा ?

उत्तर : शुभराग को हेय जानने से शुभराग छूटता नहीं है। स्वभाव का माहात्म्य आने पर शुभराग का माहात्म्य छूट जाता है; परन्तु शुभराग नहीं छूटता। शुभराग तो भूमिकानुसार अपने काल में आए बिना रहता नहीं। वस्तु के सच्चे स्वरूप का ज्ञान करने पर स्वच्छन्दता रह नहीं सकती।

प्रश्न : यह सत्य बात सुनने पर भी वर्तमान में धर्म प्राप्त न हो तो क्या करें ?

उत्तर : सत्य का श्रवणादि रसपूर्वक करता है, इसलिये उससे संस्कार पड़ते हैं, इन संस्कारों से धर्म प्राप्त होता है। भले अभी विकल्प न टूटे तो भी उसके संस्कार से भविष्य में धर्म प्राप्त होता है।

प्रश्न : गृहस्थ को पुण्य परिणाम का क्षय करना ह्न ऐसा आप कहते हो ?

उत्तर : पुण्य परिणाम का क्षय तो जब शुद्धोपयोग पूर्ण हो, तब होता है। निचली भूमिका में तो पुण्य परिणाम का क्षय नहीं हो सकता; फिर भी पुण्य परिणाम हेयरूप है, क्षय करने लायक है ह्न ऐसी दृष्टि प्रथम करनी चाहिये। पुण्यभाव हेय है, क्षय करने योग्य है; ऐसा जो नहीं मानता ह्न वह मिथ्यादृष्टि है। निचली भूमिका में शुभभाव आए बिना रहता नहीं; फिर भी पहले दृष्टि में उसका निषेध होना चाहिए।

प्रश्न : जीव अभी (वर्तमान में) पुण्य-पाप करता है, उसका फल कब मिलता है ?

उत्तर : किये हुए पुण्य-पाप का फल किसी जीव को इसी भव में प्राप्त हो जाता है और किसी को अगले जन्मों में मिलता है। किसी को पुण्यभाव एवं पवित्रता की विशेषता के बल से पूर्व के पाप संक्रमित होकर पुण्यरूप भी हो जाते हैं। इसीप्रकार तीव्र पाप से पूर्व का पुण्य पलटकर पापरूप भी हो जाते हैं। यह बात पूर्वबद्ध कर्मों की अपेक्षा से की है। जब परिणाम अपेक्षा से विचार करें तो पुण्य-पाप के भावों का भोग तो उन परिणामों के समय ही जीव को हो जाता है, उनकी मन्द-तीव्र आकुलता का तो उसीसमय जीव को वेदन हो जाता है। कोई जीव शुद्धता के बल से पूर्वबद्ध कर्मों को उनके फल मिलने से पहले ही छेद डालता है।

प्रश्न : कषाय को मन्द करे तो अन्तर्मुख होता है न ?

उत्तर : नहीं। संसार को कृष करे तो संसारातीत होवे। विष को हल्का करे ह्न पतला करे तो अमृत होगा क्या ? पुण्य और पाप दोनों ही बन्ध का कारण हैं, विषरूप हैं, अमृत से विरुद्ध भावरूप हैं। उन दोनों में से किसी एक को ठीक और दूसरे को अठीक मानना, शुभ और अशुभ में भेद मानना, शुभ-अशुभ में कुछ अन्तर है ह्न ऐसा मानना, यह सब घोर संसार में भटकने के कारण हैं ह्न ऐसा कुन्दकुन्द आचार्य कहते हैं। भगवान आत्मा अमृतस्वरूप है, उसके सन्मुख होने का साधन वह स्वयं ही है, कषाय की मन्दता किंचित् मात्र भी साधन नहीं है। कषाय की मन्दतापूर्वक शुक्ललेश्या के भाव करके द्रव्यलिंगी नवमें ग्रैवेयक तक गया, तथापि मिथ्यात्व छूटा नहीं।

शिविर सानन्द सम्पन्न

01.कारंजा (लाड–महा.) : यहाँ श्री महावीर ज्ञानोपासना समिति एवं महावीर ब्रह्मचर्य आश्रम ट्रस्ट तथा दिगम्बर जैन शेनगण मंदिर की ओर से दिनांक 10 से 19 अगस्त तक आध्यात्मिक स्वाध्याय शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में पण्डित अभयकुमारजी देवलाली, पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा इन्दौर, पण्डित मानमलजी कोटा तथा स्थानीय विद्वान पण्डित धन्यकुमारजी भोरे एवं विदूषी विजयाताई भिसीकर कारंजा के समयसार ग्रंथाधिराज के कर्ताकर्माधिकार पर मार्मिक प्रवचन हुए।

शिविर का उद्घाटन समारोह मंदिर के अध्यक्ष देवकुमारजी बवरे की अध्यक्षता तथा समापन कारंजा के विधायक राजेन्द्रकुमारजी पाटनी की उपस्थिति में सम्पन्न हुआ। शिविर में लगभग 375 शिविरार्थियों ने धर्मलाभ लिया।

02. देवलाली (नासिक–महा.) : यहाँ स्व. श्री मगनलाल जीवनलाल बोटादरा एवं श्रीमती रमीलाबेन मगनलालजी बोटादरा की स्मृति में उनके सुपुत्र श्री विजयभाई बोटादरा परिवार मुम्बई की ओर से दिनांक 17 से 19 अगस्त, 2007 तक त्रिदिवसीय विशेष ज्ञान शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर पूजनादिक कार्यक्रमों के साथ ही प्रात:कालीन सभा में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, दोपहर की सभा में पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर एवं पण्डित संजीवजी गोधा तथा रात्रि में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित राजेन्द्रजी के प्रवचनों का लाभ मिला। आपके अतिरिक्त ब्र.हेमचंदजी 'हेम' एवं पण्डित बाबूभाई मेहता फतेपुर के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ।

इस प्रसंग पर रमेशभाई एवं विपिनभाई बड़वाण वालों के द्वारा विशेष भक्ति का आयोजन किया गया। इसके साथ ही बोटादरा परिवार द्वारा गुरुदेव श्री की पुण्यभूमि सोनगढ़ पर आधारित नाटिका की सुन्दर प्रस्तुति दी गयी।

सिद्धचक्र महामण्डल विधान सानन्द सम्पन्न

हिंगोली : यहाँ श्री महावीर भवन में दिनांक 27 अगस्त से 3 सितम्बर,07 तक सिद्धचक्र मण्डल विधान का आयोजन किया गया। इस अवसर पर पण्डित आदित्यजी शास्त्री खुरई के प्रात: विधान की जयमाला एवं सायंकाल समयसार पर प्रवचन हुये। दोपहर में लघु जैन सिद्धांत प्रवेशिका की कक्षा ली गई । सायंकाल पण्डित सन्मतिजी शास्त्री पिड़ावा ने बाल कक्षा ली।

विधि–विधान के समस्त कार्य उक्त दोनों विद्वानों ने ही सम्पन्न कराये। सम्पूर्ण कार्यक्रम पण्डित अमोलजी संघई शास्त्री के संयोजन में सम्पन्न हुये।

गोष्ठी सम्पन्न

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर की रविवारीय गोष्ठियों की श्रृंखला में दिनांक 2 सितम्बर, 07 को '**सम्यग्दर्शन: एक अनुचिंतन**' विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी की अध्यक्षता पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा ने की । श्रेष्ठ वक्ता के रूप में उपाध्याय वर्ग से अंकित जैन छिन्दवाड़ा व शास्त्री वर्ग से चैतन्य जैन बकस्वाहा को चुना गया। संचालन सचिन जैन भरड़ा व अभिषेक जैन ढिगसर ने किया।

वैराग्य समाचार

01. श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक एवं मंगलायतन के निर्देशक श्री अशोककुमारजी लुहाड़िया के पिताजी **बिजौलिया निवासी श्री चांदमलजी लुहाड़िया** का 80 वर्ष की अवस्था में दिनांक 2 सितम्बर, 07 को पूना में देहावसान हो गया। आप कुछ दिनों से अस्वस्थ थे। ज्ञातव्य है कि आप गहन तत्त्वाभ्यासी आत्मार्थी थे। टोडरमल स्मारक में लगनेवाले प्रत्येक शिविर में आप उपस्थित रहते थे। महाविद्यालय के विद्यार्थियों के प्रति आपका विशेष स्नेह था। पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट परिवार आपकी सद्गति की कामना करता है।

02. श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक श्री विमलकुमारजी शास्त्री (गुढ़ा) जयपुर की मातुश्री **श्रीमती पूनाबाई** जैन का दिनांक 12 अगस्त, 07 को 82 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया है। आप धार्मिक एवं स्वाध्यायप्रिय महिला थीं। आपकी स्मृति में जैनपथ प्रदर्शक एवं वीतराग–विज्ञान को 201/–रुपये प्राप्त हुये हैं।

03. गोहाटी निवासी श्री जयचन्दजी पाटनी का 84 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया है। आप श्री दि. जैन समाज गोहाटी एवं दि. जैन विद्यालय गोहाटी के अध्यक्ष थे। विगत 20 वर्षों से पंचायत के सक्रिय कार्यकर्त्ता होने के साथ–साथ अच्छे मुमुक्षु एवं स्वाध्यायी थे।

04. जामनगर निवासी श्री किशोरभाई मोतीलाल मेहता का दिनांक 15 अगस्त, 2007 को 70 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया है। आप जामनगर मुमुक्षु मण्डल के ट्रस्टी थे तथा सोनगढ और देवलाली में धर्म लाभ लेते रहते थे। आपको अच्छा तत्त्वाभ्यास था।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शाश्वत सिद्धपद की प्राप्ति करें ह्न यही हमारी मंगल भावना है। **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

छात्रों की तिजारा-यात्रा

जयपुर : दिनांक 26 अगस्त, 07 को श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के समस्त (170) छात्रों को जयपुर से अतिशय क्षेत्र तिजारा (अलवर) ले जाया गया। जहाँ प्रात:काल शांति विधान का आयोजन किया गया।

इसी अवसर पर महाविद्यालय के छात्रों द्वारा **द्रव्य-गुण-पर्याय** विषय पर विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया। सभा की अध्यक्षता श्री एम.एल. जैन जवाहर नगर ने की। इस अवसर पर विद्यार्थियों के अतिरिक्त ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शांतिकुमारजी पाटील, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री, पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री का उद्बोधन प्राप्त हुआ। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में उपाध्याय वर्ग से संयम जैन एवं शास्त्री वर्ग से विवेक जैन सागर को चुना गया।

सायंकाल तिजारा से लौटते समय नवनिर्मित रत्नत्रय जिनालय चेतन एन्क्लेव, अलवर में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन द्वारा यात्रा संघ का स्वागत किया गया। यहाँ पण्डित शांतिकुमारजी पाटील के प्रवचनोपरान्त जिनेन्द्र भक्ति का आयोजन किया गया। विराट नगर की नसियां में दर्शन एवं भक्ति का आयोजन हुआ।

ज्ञातव्य है कि यात्रा का सम्पूर्ण आयोजन श्री ब्रजमोहनजी विनोदजी जैन एवं श्री सुशीलजी जैन के आर्थिक सहयोग एवं भावना से किया गया।

(इष्टोपदेश प्रवचन, पृष्ठ : 18 का शेष...)

जो अपने त्रिकाली ध्रुव स्वभाव की दृष्टि करके उसमें ही एकाग्र होता है, वह धर्मी कहलाता है। धर्म करनेवाले - ऐसे धर्मी की रुचि सदा ही अपने स्वभाव की ओर झुकी रहती है।

स्वात्मतत्त्व अर्थात् अपना आत्मभाव। जो ज्ञायक परमानन्द शुद्धस्वभाव है वही स्वात्मतत्त्व है। ज्ञान-दर्शन-आनन्द आदि जीव का कायमी ध्रुव स्वभाव है, वही स्वात्मतत्त्व है। शरीर, वाणी, मन, शुभाशुभ विकारी भाव स्वात्मतत्त्व नहीं है तथा जीव की विशेष अवस्था भी पूर्ण आत्मस्वभाव नहीं है।

यह इष्टोपदेश शास्त्र है। इसमें जीव को आनन्द की प्राप्ति का प्रयोजन है। निज स्वात्मतत्त्व में स्थिर होते ही सिद्धपना प्रगट होता है। **(क्रमश:)**

चित्रकला प्रतियोगिता

दशलक्षण महापर्व के पावन अवसर पर, दिव्यध्वनि प्रचार-प्रसार ट्रस्ट, मुंबई द्वारा चित्रकला प्रतियोगिता आयोजित की जा रही है, जिसमें 12 अक्टूबर, 07 तक प्राप्त होने वाली प्रविष्टियों में से प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करनेवालों को ग्रीष्मकालीन शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर में सम्मानित किया जायेगा तथा वीतराग-विज्ञान और जैन पथप्रदर्शक में उनके नाम भी प्रकाशित किये जायेंगे। विषय ह्न

(1) जैन कलर बुक भाग -1 से (क) झंडा (ख) तीर्थंकर आदिनाथ (ग) तीर्थंकर महावीर (घ) तीर्थंकर पद्मप्रभ (ङ) तीर्थंकर पार्श्वनाथ। **(2) जैन कलर बुक भाग - 2** से (क) ध्यानी बच्चा (ख) कलश (ग) छत्र (घ) पीछी (ङ) कमण्डल।

कैसे करें ह्न (1) प्रत्येक पुस्तक में से चार-चार फोटो में उपयुक्त रंग भरें। (पाँच वर्ष से अधिक उम्र के प्रतियोगी को स्वयं चित्र बनाकर भरना अनिवार्य है। पुस्तक के मध्य में चार पेज इसी हेतु दिये गये हैं।) **(2)** 8 से 12 वर्ष तक आयु के बालक-बालिकाओं को ह्न देवदर्शन, पूजा-थाली, पहाड़ पर मंदिर, प्रवचन, पाठशाला आदि में से तथा 12 से 25 वर्ष तक आयु वाले बालक-बालिकाओं को आहार, षट् लेश्या, अष्ट प्रातिहार्य, सोलह स्वप्न, रात्रि भोजन त्याग में से चित्र बनाना है। **(3)** कोई भी चित्र ए-4 साइज से बड़ा न हो। **(4)** तैयार चित्रों को दिव्यध्वनि प्रचार-प्रसार ट्रस्ट मुंबई के पते पर 12 अक्टूबर तक मिलना अनिवार्य है। **(5)** जैन कलर बुक भाग-1, भाग-2 आपको आपके बुक स्टॉल पर अथवा आराध्य प्रकाशन, मुंबई पर उपलब्ध है। ह्न अविनाश टडैया, दिव्यध्वनि प्रचार-प्रसार ट्रस्ट,

ए-1704, गुरुकुल टॉवर, जे.एस. रोड़, दहीसर (प.), मुंबई ह्न 68, मो. 09221225264

हार्दिक बधाई

01. श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक **श्री अतुलकुमार देवड़िया** हाल ही में भारती विद्यापीठ पूना से एम.बी.ए. करके भावनगर में एस.बी.आई. लाइफ इन्श्योरेन्स कंपनी में बिजनेस डेवलेपमेन्ट मैनेजर के पद पर नियुक्त हुए हैं। जहाँ आपकी सालाना आय 2.5 लाख रुपये है।

02. श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक **श्री रत्नेश मेहता** ने 2007 में ही आई.एम.टी.नागपुर से एम.बी.ए. किया है तथा वर्तमान में आप अहमदाबाद में इंडिया इन्फोलाइन लिमिटेड कंपनी में इन्वेस्टमेन्ट एडवाइजर के पद पर कार्य कर रहे हैं। जहाँ आपकी सालाना आय 3.5 लाख रुपये है।

आप दोनों को वीतराग-विज्ञान एवं महाविद्यालय परिवार की ओर से हार्दिक बधाई।

ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, जयपुर में

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा आयोजित

दसवाँ आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

(बुधवार, दिनांक १७ अक्टूबर से शुक्रवार, दिनांक २६ अक्टूबर,०७ तक)

आपको सूचित करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित किये जाने वाले शिविरों की शृंखला में दसवाँ आध्यात्मिक शिक्षण शिविर आगामी 17 अक्टूबर से 26 अक्टूबर, 07 तक अनेकानेक आध्यात्मिक कार्यक्रमों सहित आयोजित होने जा रहा है।

इस शिविर में डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित सुदर्शनजी जैन बीना, पण्डित प्रकाशचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, पण्डित स्वानुभवजी शास्त्री मुम्बई, पण्डित मनीषकुमारजी शास्त्री रहली, पण्डित ज्ञायकजी शास्त्री राजकोट, कु. अनुप्रेक्षा जैन मुम्बई आदि अनेक विद्वानों का व्याख्यानों एवं प्रवचनों के माध्यम से लाभ मिलेगा। शिविर में सपरिवार इष्ट-मित्रों सहित पधारने हेतु सादर आमंत्रण है।

झण्डारोहण एवं उद्घाटन समारोह
बुधवार, 17 अक्टूबर 07 को प्रात: 8.00 बजे से

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट एवं भारतवर्षीय वीतराग विज्ञान पाठशाला समिति का अधिवेशन
रविवार, २१ अक्टूबर को दोपहर २.३० बजे से

भवदीय

सुशीलकुमार गोदीका
अध्यक्ष

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल
महामंत्री
एवं
समस्त ट्रस्टीगण पण्डित
टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर